गुरुवाणी

आज कर्म करने की जरूरत है।
कर्मशील व्यक्ति ही पूजे जाते हैं।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१५, अंक १६, वाराणसी। रविवार ३० अगस्त २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

आसक्ति

इस संसार में मनुष्य को उसके वास्तविक अधिकारों से वंचित करने वाले दुष्पार्थिव कारकों में आसक्ति का स्थान सर्वोपरि है। आसक्ति यानी लिप्तता या मानसिक लगाव, जो मानव को अनायास ही अपना दास बना डालती है उसकी सांसारिक पदार्थों, व्यक्तियों, वासना, लोभ, मोह के प्रति अत्याकर्षण या उसे न छोड़ने को उत्कंट इच्छा का ही दूसरा नाम आसक्ति है। ज्यों-ज्यों इसका आवरण जमा होता है, यह मानव को नितान्त कमजोर बनाती चली जाती है। यानी इसे दु:ख कारक के रूप में ही स्थान दिया गया है। जैसे हमारे शरीर रूपी किले के दो मुख्य रक्षक जननेन्द्रिय एवं जिह्वा हैं। यदि ये किसी आसक्ति के प्रभाव में आ जाते हैं तो अनुशासन भंग होता है तथा पूरे किले यानी पूरा शरीर ही निरापद नहीं रह जाता, बल्कि वह शारीरिक दुश्मनों, बीमारियों, भय के, चपेट में आ जाता है। फलत: मोह, चंचल मन की प्रवृत्ति, व्यक्तित्व में असंतुलन बढ़ाता जाता है। फलत: हम नाना प्रकार के सांसारिक विघ्न बाधाओं से घिरकर अपने जीवन को असुर संग्राम बनाकर नर्क का वातावरण झेलने को मजबूर हो जाते हैं। **''साधु इतना दीजिये जामे कुटुम्ब समाय''** की स्थिति के विपरीत हमारे अन्दर घोर संग्रह की प्रवृत्ति घर कर लेती है। षड्विकारों से हम अनजाने में ही ग्रस्त हो जाते हैं एवं तब दिखावटी, पूजा-पाठ का भी कोई अर्थ नहीं रह जाता क्योंकि चंचल मन भटकत दिन राति की भांति ही भृगु मरीचिका के शिकार बन जाते है। अस्तु चुपके से किसी विकार खासकर किसी भी वर्ज्य पदार्थ, वस्तु के प्रति आसक्ति में न हम पड़ जायें, उसके लिये हमें सतत स्वयं पर ही सावधानी बरतनी होगी। प्रत्येक दिन मल एवं विष्ठा की भांति कुविचारों, दुर्भावनाओं को अपने अन्दर से निकालते रहने को तत्पर रहना पड़ेगा, अन्यथा इनके विषाणुओं को फैलते देर नहीं लगती एवं अच्छा, सुन्दर सुरम्य जीवन भारस्वरूप प्रतीत होने लगता है। जिसके जिम्मेदार हम स्वयं ही है। अत: हमारे जीवन को संवारने सुधारने के लिये परम आवश्यक है कि हम अपनी मानसिक स्वच्छता में आलस्य को स्थान न दे बल्कि निरन्तर अपने में प्रेम, नम्रता, सहनशीलता, सहिष्णुता के सद्गुणों को भरें जिससे अनावश्यक अहंकार, दर्प, दंभ का समावेश हमारे ईश्वर प्रदत्त इस पवित्र किले में न हो सके, वरना हमारे परमात्मा का गर्भगृह यानी यह शरीर इन्हीं अवांछनीय तत्त्वों का जमावड़ा सिद्ध हो जायेगा। आसक्ति के विभिन्न भयावह रूप होते हैं। कृपणता, लोभ, अहंकार, काम, क्रोध, सभी विकार आसक्ति का ही परिणाम होता है। कबीरदास जी कहते हैं कि-

गाँठ दाम न बाँधेहिं, नहिं नारी से नेह।
कह कबीरता साधु की हम चरनन के खेह।।

इसी प्रकार आसक्ति से दूर रहने एवं स्वयं को निर्लिप्त भाव से इष्ट में लगाने को हितकर बताते हुए तुलसीदास जी कहते हैं-

कामहिं नारी पियार जिमि,
लोभहिं प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर,
प्रिय लागहिं मोहि राम।।

व्यक्ति का गुण ही है जो उसे साधारण व्यक्तित्व से अप्रतिम व्यक्तित्व की ओर मोड़ देता है अस्तु हमें अपने सामर्थ्यानुसार परोपकारिता, दानशीलता, क्षमाशीलता जैसे कारकों को अपनाना होगा एवं उसे कार्यान्वित करके अपने को कृतार्थ करते रहना होगा क्योंकि कर्म एवं प्रवृत्ति से ही मनुष्य की पहचान होती है। यह भी तथ्य है कि इन्हीं गुणों से सुसम्पन्न व्यक्ति को ईश्वर का कृपापात्र कहते हैं **''कर्म से ही सबकी पहचान, सबको सन्मति दे भगवान, सारा जग तेरी सन्तान''** के यथार्थ को हमें दृष्टिगत रखते हुए अपनी जीवन-यात्रा सफलता से जारी रखनी पड़ती है। कुसंगति, दुर्जनों के सान्निध्य से भी बचना हमार कर्त्तव्य है अन्यथा बुरी चीजों के प्रति अनायास आकर्षण, आसक्ति, छिछले व्यक्तित्व के स्वामी के चंचल मन को प्रेरित कर अपनी ओर खींच कर हमें दुर्भाव एवं दु:शीलता से दर-दर की ठोकर खाने एवं समाज में अपमानित जीवन जीने को बाध्य कर देता है। अत: अपने को, अपने विचारों को, अपने अस्तित्व को सदैव इस परीक्षण में गुजारते रहना होगा कि कहीं हमारे अन्दर किसी प्रकार की मलीनता घर न करने पावे। यानी किसी भी परिस्थिति में हमारा मन मस्तिष्क शांतचित्त प्रसन्न एवं अवमुक्त रहे; प्राणियों के प्रति सद्भावना बनी रहती है तो स्पष्ट समझिये कि अघोरेश्वर की कृपा दृष्टि निरन्तर हो रही है। यदि कहीं आलस्य, प्रमाद, ईर्ष्या, द्वेष, कलह, भेदभाव अथवा धृतराष्ट्री मोह घर कर रहा है, उत्पन्न हो रहा है तो समझिये महाप्रभु के द्वारा आपको चेतावनी का संकेत किया जा रहा है। अत: प्रतिदिन अपने पुरुषार्थ एवं प्रार्थना से हम महाप्रभु से यही कामना करें कि हमें मन, कर्म, वाणी से सदा अपने अनुकूल अपना अनुयायी बनावें, हमारी आत्मिक शक्ति बढ़ती जाय, हमारा आत्मबल ऊँचा रहे, ताकि दुर्गणों की प्रविष्टि न हो सके। नाना प्रकार के आसुरी प्रहारों से हम प्रभावित न हो बल्कि हममें इतनी क्षमता का विकास हो जिससे हम **''वयं राष्ट्रे जाग्रियाम पुरोहिता:''** के सच्चे अर्थों में संवाहक बन सके। हमारे इर्दगिर्द वातावरण सुविचारों से सुगन्धित होता रहे।

यह भी निर्विवाद है कि मानव जीवन धूप-छांव, रात्रि-दिवस की भांति परिवर्तनशील है। हर किसी को, कभी न कभी, किसी न किसी रूप मे दु:खों का, दुसह्य परिस्थिति का सामना करना ही पड़ता है परन्तु वे इसे विधि का विधान समझ कर बखूबी झेल लेते हैं। जबकि कमजोर मानस का स्वामी विपरीत परिस्थितियों के समक्ष घुटने टेकने को मजबूर हो जाता है एवं सच्ची उपासना के मार्ग से दूर हो भटकते चले जाते हैं। उनका अधकचरा, अध्यात्मिक ज्ञान काफूर हो जाता है। वे उसी रटन्तू तोते की तरह सिद्ध हो जाते हैं जो निरन्तर प्रवाह में अपने जागते रहने के ज्यादा से ज्यादा समय में राम-राम रटता रहता था, परन्तु पिंजड़े पर ज्योंहीं बिल्ली का पंजा देखता था, वह टाँय टाँय चिल्लाने लगता था। तात्पर्य यह है कि **''बिन विश्वास न कौनो सिद्धि''** के बिना हम सफलतापूर्वक जीवन यापन नहीं कर सकते। मार्ग की बाधायें हमें आंधी, तूफान, अनवरत वृष्टि, ओला वृष्टि की भांति सन्मार्ग से पदच्युत करने का भरसक प्रयत्न करती रहती है क्योंकि सुर एवं असुर संग्राम तो हमारे किले के अन्दर प्राकृतिक रूप से निरन्तर चलता ही रहता है। हमारी इन्द्रियाँ भी दासता की प्रवृत्ति उत्पन्न करने में कोई कोर कसर नहीं उठा रखती। अस्तु, स्वयं को निरन्तर अभ्यास

शेष पृष्ठ दो पर

अघोर दर्शन

विश्व में जितने भी अध्यात्मिक मार्ग, पथ हैं, धर्म हैं, सबके मूल में एक ही अभीष्ट है, मानव जीवन को सुखी-समुन्नत बनाने की अभिलाषा। समस्त धर्मग्रन्थों, शास्त्रों का निर्विवाद निचोड़ है, मानव के सुखी जीवन का विधान एवं उसे उसकी प्राप्ति कराना। यह अनुभव करना उसी प्रकार है जैसे माउंट एवरेस्ट की चोटी फतेह करने के लिये विभिन्न मार्गों से वांछित गंतव्य तक आसानी से पहुँचने पर पर्वतारोही को आत्मिक संतोष की प्राप्ति होती है। मानव जीवन के प्रारम्भ एवं सभ्यता के आरंभ से ही मानव इस अलौकिक सुख के लिये सदैव से लालायित रहा है। निश्चित रूप से आध्यात्मिक विधा में हमारा यह आर्यावर्त अत्यन्त प्राचीन समय से ही विश्व को आलोकित करता रहा है।

विधि के नियामक देवों के देव आदिदेव कापालिक महेश्वर के रूप में एवं शक्तिस्वरूपा जगत् जननी माँ सर्वेश्वरी विभिन्न नाम एवं रूपों में अनादिकाल से विराजमान हैं। मानव ही नहीं बल्कि प्रत्येक जीवधारी में प्राण रूप में उसी सर्वशक्तिमान की शक्ति का अंश प्रदर्शित होता है। जीवधारियों में वसुंधरा पर सर्वश्रेष्ठ मानव तो उनकी अप्रतिम रचना है। माँ के गर्भ से जन्म लेने से लेकर मृत्युपर्यन्त राख होने या दफन होने तक की अवधि जीवन काल होती है, जीवन यात्रा कहलाती है। माँ के गर्भ का यदि हम जीव विज्ञान की दृष्टि से विश्लेषण करे तो यहाँ का वातावरण बड़ा ही जटिल है। उसी वातावरण में मानव शिशु के रूप, रंग, आकार, अंग प्रत्यंग का निर्माण सुनिश्चित होता है। फलत: एक निर्धारित अवधि के पश्चात् नवजात शिशु का धरा पर पदार्पण होता है तथा अपनी उम्र जीने के पश्चात् उसे ईश्वर प्रदत्त इस नश्वर शरीर को छोड़ना ही पड़ता है। इसी जन्म एवं मृत्यु के मध्य की अवधि में वह जीवन में सुख-दु:ख, हानि-लाभ, धूप-छाँव आदि के अनुभव को प्राप्त करने को बाध्य होता है। शैशव काल से ही मनुष्य में अनुकूल स्थिति को पाने की प्राकृतिक चाह प्रकृति प्रदत्त ही बनी रहती है, इन्हीं अनुकूलताओं, सुविधाओं, प्रशस्त मार्ग के अवम्बन के लिये परिवार, समाज, राष्ट्र के द्वारा विभिन्न धर्मों, पंथों का अनुसंधान कर उसे पीढ़ी दर पीढ़ी अपनाने हेतु अपने संतति को आकृष्ट किये जाने की परम्परा रही है।

समस्त विश्व में प्रचलित धर्मों, पंथों के अभीष्ट की प्राप्ति हेतु सर्वशक्तिमान शिव जी के द्वारा अघोर निनाद कर औघड़ पद को प्रतिष्ठित किया गया है। अघोर कोई धर्म या पंथ विशेष नहीं बल्कि यह पद है जिसमें प्राकृतिक रूप से विधिनुसार योग, तपस्या, चमत्कार का पुंज धनीभूत रहता है। इस पद के धारक को अघोरी कहते हैं एवं वे विश्व में कहीं भी दुर्लभतम रूप में प्रकट होकर निरन्तर मानव कल्याण की कामना करते हैं। भूतभावन भगवान शंकर का ही मानव रूप अघोरी कहलाता है जो माँ जगद् जननी के तेजोमय ऊर्जा से ओतप्रोत होकर जग के कल्याणार्थ निष्पादित करते हैं। सिद्धि, चमत्कार से वे परे सदा ब्रह्मलीन अवस्था में विराजते हैं। औघड़, अघोरी, औलिया, खेपा, मलंग, परमहंस के पद को प्राप्त कर वे सूर्य, चन्द्र, हवा, जल की भाँति निरपेक्ष रूप से मानव समाज के लाभ प्रदाता बने रहते है। मानव शरीर में निवास करते हुए भी वे सांसारिक मान, अपमान से परे आत्मबुद्धि से युक्त रहते हैं, उनकी कोई न तो वेशभूषा निर्धारित है न खान-पान। वे समदर्शिता एवं समवर्तिता के जीते-जागते, चलते फिरते दृष्टान्त होते हैं, जिन्हें सतर्क व्यापक बुद्धि के व्यक्ति ही पहचान पाते है। सर्वग्राही एवं सर्वकल्याणी होने के कारण जिस भी जीव पर उनका दृष्टिपात होता है, वह उनका अनुचर, अनुयायी हो आनन्द पथ में अघोर स्नेह, सहानुभूति से परिपूरित हो जाता है। जो भी इनके सम्पर्क में जाने या अनजाने चले आते है, उसी समय से उनकी परिशुद्धि, परिमार्जन होने लगता है ताकि उनके कोई कदम वर्ज्य की तरफ पड़ने ही न पाये। वे सदा दया की प्रतिमूर्ति, व्यक्ति के भूतकाल में किये गये पाप कर्मों को भी नष्ट कर अनुदान देने की नैसर्गिक क्षमता रखते हैं। वे यम, नियम, प्राणायाम, ध्यान, पूजा-पाठ, कर्मकांड, वेद-वेदांग आदि से परे सर्वसिद्ध होते है। जिनकी वाणी अघोरेश्वर निनाद की श्रेणी में आती है। अघोरेश्वर अपने भक्तों, श्रद्धालुओं के हित में विधि के विधान को भी पलटने में जरा सा संकोच नहीं करते। भक्तजनों के आर्त पुकार पर वे खम्भा फाड़कर भी किसी न किसी रूप में प्रकट होकर वे सतत रक्षा कर कृतार्थ करते रहते हैं। उनका नेत्रपात ही समस्त जंजालों, भंवरों से मुक्ति प्रदान करने वाला होता है इसीलिये वे समस्त पंथों, प्रथाओं, कर्मकाण्डों, वेदों, शास्त्रों के प्रणेता कहे जाते हैं। जो सदैव सरल, प्रसन्नचित्त एवं साधारण मानव की भांति समाज का दिग्दर्शन करते रहते है।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**
e-mail–kinaram@rediffmail.com
www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

आसक्ति

में रत रहकर परिष्कार के द्वारा अपने को निखारते रहने की आदत डालनी पड़ती है। यद्यपि यह भी प्राकृतिक ही है कि ढलान की तरफ प्रत्येक जीव यहाँ तक कि अजीवित वस्तु भी बड़े ही तेजी के साथ लुढ़कते हैं जबकि हमें निरन्तर, उत्तरोत्तर ऊँचा उठने में मनोदशा को नियंत्रित करना पड़ता है। अघोर वचन शास्त्र के ''आसक्ति'' शीर्षक अध्याय के अनुसार महाप्रभु के द्वारा मनुष्य की प्रवृत्ति को, इच्छाओं को, उसके मानसिक अवस्था को, सदैव तीर की तरह सीधा होना चाहिये ताकि सद्लक्ष्य के प्रति बुद्धि सदैव तत्पर बनी रहे। अघोर का सच्चा उपासक किसी भी परिस्थिति में भयभीत अथवा विचलित नहीं होता, क्योंकि भय का कारक गलत मार्ग पर उसके कदम ही नहीं जाते। वह ईश्वर के प्रति, अघोरेश्वर के प्रति भयभीत होकर उनकी भक्ति नहीं करता। बल्कि वह तो माँ गुरु के अंक में, प्रेमालिंगन में अपने को पड़ा पाता है। उसकी अपने इष्ट के प्रति मातृ वत्सल अनुरक्ति बनी रहती है। जो बुद्धि विवेक को विपरीत दिशा में जाने ही नहीं देती। यद्यपि हमारी मन की चंचलता, हमारी असफलता, हमें कम्पित करती रहती है। वह सत्य को त्याज्य कर असत्य का आचरण कर भटकाव की स्थिति में अक्सर पहुँच जाती है। जिससे ऐसा व्यक्ति कभी पूर्णता को प्राप्त ही नहीं कर पाता बल्कि विपरीत दिशा में चलकर अपनी हानि स्वयं कर बैठता है। यहाँ तक कि उच्चश्रृंखल व्यक्ति तो महान आत्माओं का भी उपहास करने में नहीं चूकता। अत: पवित्र एवं ऊँची आत्माओं के सान्निध्य की किरणें हमें हर प्रकार से सुशोभित ही करती है। जबकि परनिन्दा उपहास की प्रवृत्ति गड्ढे में ढकलने के लिये उद्यत रहती है।

यह भी सर्वविदित तथ्य है कि विधाता द्वारा प्रत्येक प्राणी खासकर मनुष्यों को अपने अलौकिक ढाँचें में ढालकर, अलग-अलग गुणों, रूपों से आच्छादित कर अद्भुत रचा गया है। प्रत्येक व्यक्ति की मौलिकता का कोई सानी नहीं है। बशर्ते कि उसे हम निखार कर परिष्कार कर प्रखर कर लें। ताकि उस सुघड़ता से हम ईश्वर के अनुगामी की भांति इस संसार में अपने सद्कार्य सद्प्रयोजन को सिद्ध कर सकें। किसी व्यक्ति को किसी दूसरे का प्रतिरूपण, नकल अथवा स्वांग करने की लालसा सदैव निष्फल बनाती है। प्रत्येक व्यक्ति के अपने अन्दर के अदम्य ऊर्जा को एकाग्र कर उसे कार्य रूप में परिणित किये जाने में अजस्र सिद्धि की प्राप्ति सुनिश्चित की जा सकती है। क्योंकि बिना जल के अतल में गोता लगाये मोती प्राप्त करना दिवास्वप्न की भांति सालता रहता है। अच्छे लम्बे राह चलने वालों को पुरुषार्थी, अध्यवसायी व परिश्रमी की श्रेणी से नवाजा जाता है। उन्हें धूर्तता अथवा चालाकी का सहारा नहीं लेना पड़ता। जबकि शार्टकट अथवा अल्प समय साधन से सब कुछ प्राप्त कर लेने वाले लालायित लोभियों को अन्तत: असफलता ही हाथ लगती है। उनका पलायनवादी मस्तिष्क अपने अभीष्ट के प्रति ईमानदारी नहीं बरतता। बल्कि छल छद्म के द्वारा वह प्राप्त कर लेना चाहता है जिसका वह अधिकारी नहीं होता। यदि येन-केन-प्रकारेण उसे अभीष्ट की प्राप्ति हो भी जाती है तो उनकी स्थिति सीढ़ी के सहारे लम्बे ऊँचे पेड़ पर चढ़े व्यक्ति की ही होती है जो कालान्तर में उतरने के लिये फड़फड़ाता रहता है एवं भांडा फूट जाने पर अपमान का भागी होता है। अत: शुद्ध, सच्चा साधक खरे सोने की तरह हर स्थिति परिस्थिति में अपने प्राकृतिक चमक को बनाये रखता है। जबकि कृत्रिमता एवं स्वर्ण पालिश के उतरते, बदरंग होते देर नहीं लगती। जबकि बुद्धिमान सर्वदा विजयी की भांति उच्च ललाट लिये अटल रहते हैं। उन्हें कर्त्तव्य, ईमानदारी एवं आत्मबल का भरोसा रहता है। उन्हें धूर्तता या शार्टकट चलने की ललक ही नहीं होती।

हमारे राष्ट्र भारत भूमि की यह विशेषता है कि हमें उपहार स्वरूप विरासत में ऋषि, मुनियों, औघड़ों, औलियों, खेपाओं, परमहंसों द्वारा सुलभ, सहज मार्ग को दिखाया गया है। शास्त्रों में, उपनिषदों में विवरण है कि तत्कालीन समय में आसुरी शक्तियों को परास्त करने के लिये उनके संहार के लिये शक्तिस्वरूपिणी को दुर्गास्वरूप का वरण करना पड़ा है एवं शस्त्रों से सुसज्जित कर असुरों को धराशायी करने की भी आवश्यकता पड़ी है। महाभारत में विपुल रक्तपात की घटना कौरव राजा धृतराष्ट्र एवं महारानी गान्धारी के पुत्र मोह एवं आसक्ति के कारण ही घटित हुई थी। अपने सगे सम्बन्धियों, कुटुम्बों, परिवारजनों के दोषों को ढँकना, उनके गलत कृत्यों को भी न नकारना, कमजोरी एवं आसक्ति का ही कुपरिणाम था। जिसका कुफल कालान्तर में परिजनों के साथ ही साथ आसक्त व्यक्ति को भी बखूबी भोगना पड़ता है। अतएव निरर्थक कपोल कल्पनाओं के स्वामी होकर यथार्थ से हटकर हम जी नहीं सकते। बल्कि निर्भीक, निरहंकारी, पौरुष युक्त, कर्त्तव्यनिष्ठ बनकर अपने को एवं परिजनों को ऊँचा उठाने में सफल हो सकते हैं।

आलस्य व प्रमाद को घोर शत्रु की

शेष पृष्ठ तीन पर

चतुर्थ पृष्ठ का शेष

उनसे वंचित रह जाते हैं। हमलोग तो ऐसे हैं कि अपने हर ऐबों को छिपाने से परदा कर लिया करते हैं। इसलिये हमारी ऐब कुछ छिप तो जाते हैं, उस बखत मगर वह बड़ा भारी दुःख देता है, क्लेश देता है, बड़ा भारी वेदना देता है।

माताओं और बंधुओं! जिस शक्ति का हम उपासना के इस पर्व पर, चिन्तन कर रहे हैं, वह कोई दूसरी बाहरी वस्तु नहीं है। वह हमारे और आपके बीच का ही है। हम शायद उसके सही रूप की पहचान नहीं पाते हैं या सही क्या है उसकी सही पूजा क्या है, समझ नहीं पाते हैं। उसकी आराधना, यह फल-फूल, धूप, दीप, नैवेद्य ही है तो यह हो ही नहीं सकता क्योंकि यह तो सामग्री है, कोई देवता तो है नहीं कि धूप और दीप और नैवेद्य आदि से तौलकर उसके मापदण्ड से, उसको ले लिया जाय। हमारा उत्तम, पवित्र विचार, पवित्र भावनायें और पवित्र आचरण जब तक नहीं होगा, तब तक वह पवित्रता और उस पवित्रता का जो गुण है, वह हमसे वंचित रह जायेगा। नहीं तो, वह पवित्रता तो, ढूँढ़ता रहा है, ढूँढ़ रहा है कि हम मिलें, प्राप्त करें।

किसको प्राप्त करें? अपने उस भक्त को, अपने उस सज्जन को, उस अपने देवी को, जो हमारे बहुत नजदीक बसती हैं। न वह वसामि वैकुण्ठे, न योगिना हृदयामि च। उस गीता का वाक्य सुन रहे हैं कि वे कहते हैं कि न मैं बैकुण्ठ में रहता हूँ, न योगियों के हृदय में रहता हूँ। मुझे जो याद करता है, मैं उसी के साथ रहता हूँ। तो भगवती या भगवान आपको न किसी मंदिर में मिलेंगे, न आपको कहीं देवालयों में मिलेंगे, न किसी मूर्ति में मिलेंगे और न कहीं आपको स्वर्ग लोक में मिलेंगे। यह जरूरी है कि वह साधु संग में रहते हैं और जो साधु संग में रहता है, उसे वे प्राप्त होते हैं। और जिसकी तबीयत ही उल्टा हो असाध्य उसमें कोई साध्य न हो, उसे तो मिलना मुश्किल है।

एक क्षण की भी उनकी उपासना पर्याप्त हो जाती है

बंधुओं! हमें जिस देवता के पूजने से, हमारी दुःख व दरिद्रता, हमारी बेचैनी व परेशानियाँ दूर हों, वह क्या है, हमें सोचना होगा, यही नहीं, करना भी होगा। और हम करें, वही हमको इन सब दुःखों से दूर करेगा। जो हम कमाते हैं, धन-धान्य तो संचय करते हैं। जो संचय नहीं करते हैं, धन-धान्य को, उसी तरह से उच्छृंखलता की तरह उसको गवा देते हैं, तो क्या होता है, परिवार परिजन, माता, पिता, भाई, बंधु, स्त्री, बच्चे उसे त्याज्य कर देते हैं, अपशब्द बोलते हैं, उसे नाना प्रकार की गालियाँ देते हैं, उसे अन्न वस्त्र से वंचित करते हैं। उसे अपने द्वार पर बैठने से वंचित करते हैं, अपने ही पुत्र पौत्रों में। जब हम परिश्रम करते हैं परिश्रम कर संग्रह करते हैं और उस संग्रह को अच्छे कार्यों में अच्छे कार्यों के लिये लगाते हैं तो वही पुत्र, पौत्र, कुटुम्ब, बन्धु, बान्धव, पत्नी, बच्चे, पिता हमारा आदर करते हैं, सम्मान करते हैं, प्यार करते हैं। हमें अपना कह कर बहुत खुश होते हैं। इतना खुश होते हैं कि कुछ कहा नहीं जा सकता।

तीन मतारियाँ एक साथ इकट्ठी हुई। तीनों अपने सिर पर (पानी का) घड़ा रखे चल रही थीं। तीनों अपने-अपने बेटों को बहुत अच्छा, बहुत सज्जन और सुसंस्कृत व्याख्या करके बतला रही थी। एक का लड़का आया और कुछ कहते हुए चला गया। दूसरे का आया और कहा- माता जी! चलो, खाना-ओना बनाओ, हम आ ही रहे हैं। और तीसरे का जो आया तो-पहले क्या काम करता है, माता के उस बोझ को, उस घड़ा को लेकर अपने सिर पर रखता है, इसके बाद पूछता है, माता स्वास्थ्य तो ठीक है, आपका मन और मस्तिष्क तो ठीक हैं न। आपने इतना क्यों तकलीफ किया, यह जल तो हम भी लाकर रख सकते थे, हमसे आप बतायी रहती तो।

देखिये! कितना फर्क है- तीनों में। सभी लोग आराधना कर रहे हैं, माता की। और देख रहे हैं, समझ रहे हैं, जान रहे हैं। जानते, समझते सब हैं, चाहे वे मोटरी लेकर चले अपने सर पर, चाहे पत्थर ढोये, मैं तो अपनी बबली फारे, अपना मुँह चटकारे और अपनी इधर-उधर की बात करते, सीटी बजाते चल रहा हूँ। दूसरा भी कुछ उसी तरह की रवैया अपनाता है। मगर तीसरा कैसा है? उस माता से और बात पूछने, दण्ड प्रणाम करने से पहले, उसका पहले बोझा हल्का करता है और तब कहता है और सब ठीक है माता। तो हमारे साथ, साथी और मित्र बहुत, हम सब एक ही माता के सन्तान हैं। एक ही माता के सन्तान होते हुए भी हम तीनों, चारों पुत्र, एक ही साथ कैसा कैसा व्यवहार करते हैं। आप देखें, किसी ने उनका बोझ उतारने की कोशिश नहीं करता न किसी ने उनसे पूछता है कि आपका घड़ा, आधा हम ले लें किसी ने कुछ नहीं कहा। और, एक सन्तान उसमें से, जो सबसे बुड़बक है, बेवकूफ है, ना समझ रहा है। वह पहला काम करता है, उनके सिर का बोझा हल्का करता है, दण्ड प्रणाम तो बाद में करेंगे।

तो बंधुओं! हम लोग काहे ये सबसे वंचित रह जाते हैं। इतनी लम्बी प्रार्थना करें, तो क्या सारा अल्पायु जीवन प्रार्थना ही करते बीत जायेगा? तो हर साल, जानते ही हैं कि पढ़ते रहेंगे और पढ़ेंगे, फेल भी हो जायेंगे तो उस क्लास के नीचे तो आयेंगे ही नहीं, वहाँ तो ठहरे ही रहेंगे। तो सारा जीवन हम वहीं ठहरे रहे या ऊपर जाय या नीचे जाय, कुछ समझ में नहीं आता है। बंधुओं! न मैं ऊपर जा रहा हूँ, न नीचे आ रहे हैं, वहाँ भी नहीं ठहर रहे हैं, वहाँ भी हमारा मन विचलित हो रहा है। और, यह बहुत दिन करते-करते, ध्यान, धारणा, जाप, हवन इतना लम्बा होता नहीं।

ॐ माँ गुरु

बाबा गौतम राम मालिक गौतम राम,
हर एक प्राणी का हो कल्याण- २
किरपा तुम्हारी अहर्निश बरसे,
व्याकुल मन दरशन को तरसे,
अब देदो अवधूत वरदान
बाबा गौतम राम! मालिक गौतम राम!!
हर एक प्राणी.....
कीनाराम के रूप में आये,
हर प्राणी को धन्य बनाये,
निर्बल अबला के रक्षक आप,
जन्म-जन्म का मिट जाये पाप,
जन-जन को मिल जाता त्राण,
दया बरसती सुबहों शाम
बाबा गौतम राम!.....मालिक गौतम राम!!.....हर एक प्राणी.....

द्वितीय पृष्ठ का शेष

भांति समझते हुए उससे सतत सतर्क रहने की भी आवश्यकता प्रबल होनी चाहिये। अन्यथा यह शत्रु हमारे गिनती के प्रकृति प्रदत्त सांसों को ऐसे चट कर जायेंगे जैसे लकड़ी को घुन या कपड़े को कीड़ा।

अत: मूल्यवान समय को सदैव महत्व देते रहने में ही भलाई है। आसक्ति का आक्रमण विभिन्न रूपों में हमारे ऊपर होता रहता है। इसका सरल निराकरण एवं सुगम मार्ग यह है कि हम अपने गुरु की वाणी को उनके द्वारा बताये गये संकेतों को शत प्रतिशत अपने जीवन में उतारने, अनुपालन करने, क्रियान्वित करने का शत-प्रतिशत प्रयास करते रहे क्योंकि अघोर दर्शन में ज्ञान से अधिक उसके क्रियान्वयन पर जोर दिया जाता है। घंटों लम्बे लम्बे व्याख्यानों अथवा प्रवचनों का प्रचलन नहीं है। बल्कि मन भर ज्ञान से कण भर आचरण को महत्व देते हुए उसे साकार किये जाने पर ही जोर दिया जाता है।

आसक्ति

आसक्ति को अपनी वाणी में अघोरेश्वर महाप्रभु भगवान अवधूत राम जी के द्वारा कहा गया है कि **''आसक्ति ही मोह है, मोह ही बंधन है, ईश्वर शरण ही इस दुःख को काटता है।''** पूज्यपाद अघोरेश्वर आसक्ति को त्याज्य बताते हुए आगे स्पष्ट करते है कि **''सुधर्मा! दुर्वासा के समान आसक्ति रहित लाभ और सत्कार, मान-अपमान सबमें समान रहना, सब कुछ भोगते हुए निष्काम निवृत्ति मार्ग में अनासक्त चलते रहना प्रवृत्ति मार्ग में थक कर बैठ जाने से श्रेयस्कर होता है। तुमने सुना है उन किंवदन्तियों को, उन जनश्रुतियों को जो सब कुछ भोगने के बाद भी नि:भोग आहार करने वालों के विषय में प्रचलित है। सभी स्थितियों में ऐसे लोग निर्लिप्त भाव से रहते हैं। यही तो पूजा है सुधर्मा! मैं पुजारी, (पूजा के अरि) बनने को नहीं कहता हूँ, निवृत्ति मार्ग में ठहरने का कोई स्थान नहीं। प्रवृत्ति में थक जाने की बहुत कुछ संभावना है। सुधर्मा! सुन रहे हो?''**

अघोरेश्वर महाप्रभु की उपरोक्त पंक्तियाँ गागर में सागर की भाँति समस्त समस्याओं का निराकरण करती हैं, जिसमें सांसारिक वस्तुओं के प्रति अनाधिकार घोषित किया गया है। क्योंकि आसक्त व्यक्ति दैवीय कृपा से कोशों दूर रहते हैं। वे कमजोर पड़ते जाते हैं। उनकी बुद्धि कलह में लिप्त हो जाती है जिससे विवेक भी प्रभावित होता है। अत: हमारी जाग्रत मानसिक अवस्था सदा इस आसक्ति रूपी आसुरी शक्ति से दूरी बनाये रखें ताकि हम भले बुरे के निर्णय करने में अपने को सक्षम व समर्थ पा सकें एवं जीवन रूपी गाड़ी को सुगम पथ पर स्वतंत्र रूप से चलायमान रखते हुए नित्य नयी-नयी उम्मीदों से अपने राह को अलंकृत करते रहें।

एक क्षण की भी उनकी उपासना पर्याप्त हो जाती है

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्म बन्धुओं!

कुछ टूटे फूटे वाणियों में हमारे साधु लोग भी आपको अपना सुनाना चाहते है। मगर, यह सब शक्तियाँ तभी हो पाती हैं जब श्रवण करें और श्रवण करके मनन करें और मनन करके तब अभिव्यक्त करे। तो यह लोग अनभिज्ञ रहे हैं। जैसा जैसा विषय इन लोगों के सामने आता गया, उसी में भुलाये हुए रहे इसलिए इनकी तोतली बोली टूटी फूटी इनका जो भाषण है, वह तो माता पिता के लिए, बड़ा ही प्यारा होता ही है। विद्वान लोगों के लिए, शायद इनकी भाषा या इनके शब्द उतने रुचिकर नहीं हो। उसके लिये हम इन लोगों की तरफ से क्षमा माँगते हैं। वे चाहते हैं- बहुत कुछ कहना चाहता हैं, उसको अभिव्यक्त नहीं कर पाते हैं क्योंकि अभ्यास नहीं किये। यदि अभ्यास करने को उन्हें बैठाया जाता है तो कुछ लोग उनके चिर परिचित आकर मनोविलीन करते हैं और वे वहाँ से विचलित हो जाते है और विचलित हो जाने पर उनमें त्रुटियाँ हो सकती है, सम्भव है।

माताओं और बन्धुओं! नवरात्र की यह चतुर्थी के उपरान्त पञ्चमी भी है और हम लोग साधना, पूजन या चिन्तन तो करते ही हैं, साथ ही साथ, एक साथ उपस्थित भी होते हैं। एक साथ मिलते जुलते, दूसरों के आचार-विचार, व्यवहार के बारे में, बहुत कुछ जानने के, समझने के नजदीक भी आते हैं। यही जानना, सुनना और समझना इस जीवन की बड़ी आवश्यक सूचना है। आप देखे होंगे- अपने जीवन में कितना बड़ा उतार-चढ़ाव होता है हर तरह का चढ़ाव उतार होता है। हम तो मनुष्य हैं- न मालूम भूल जाते हैं, याद नहीं हो पाता है या समझ नहीं पाते हैं। और समझते भी हैं, यदि क्षणिक हैं तो ऐसी हमलोगों के सामने विशेष तौर से समस्यायें आकर उपस्थित होती हैं कि जिनसे बहुत मुश्किल हो जाता है। जैसे नेत्र में एक छोटा सा कण या एक मामूली सा बालू का कण हो जाने से सारा विशाल जो दृश्य दिख रहा है सब दृश्य अदृश्य हो जाता है, नहीं दिखता है। आँख मींचने लगता है। उस छोटे से कण के हट जाने पर उस विशाल दृश्य का अवलोकन होता है।

हमलोगों के साथ-साथ, अपने इस देश में, एक समान साधन, पर्याप्त साधन न रहने का यही कारण है कि ज्यादे हम लोग देवी-देवता, भगवान भगवती, सन्त-महात्मा और-और भी जगह बहुत तेजी से दौड़ते हैं। बहुत जल्दी-जल्दी भागते हैं। जल्दी-जल्दी उनके पास तक पहुँचने की कोशिश करते हैं। यही कारण है कि हम बहुत गंभीरता को छोड़ देते हैं और उसी के सदृश्य होने का प्रयास करते हैं। यह बहुत सा ऐसा देखने में आता है कि हमारे जीवन में बहुत सा अभाव बना रहता है। यदि हमको कोई जीवन में अभाव नहीं रहता, हम संतुष्ट रहते, हमें तृप्ति रहती, संतुष्टि रहती तो इतना इस तरफ न झुक कर कुछ और दूसरे के उपकार, दूसरे के निःशेष भावनाओं को अंगीकार करने की ओर होते है। यदि कदाचित भगवान भगवती या ईश्वर इसी का प्रत्यक्ष हो जाय, मान लें, ऐसे मनुष्य के ही रूप में तो यह नहीं कहेंगे कि आप कर्त्तव्य विमूढ़ हो जाय और दरिया के किनारे बैठकर माला फेरें। वह भी यही कहेंगे कि इस धरती पर जो मनुष्य हैं, प्राणी हैं, विशेषकर उन मनुष्य प्राणियों की सेवा करो, सुश्रुषा करो, उनके दुःख में दुःखी होओ। इनकी अज्ञानता और चिन्ता के कारण ही बाधायें आ पहुँची उस अज्ञानतावश बाधाओं को दूर करने के लिए यदि उनका न कर सको तो कोई दूसरे का भी, ध्यान दो। उस अज्ञानता को दूर करना होगा। हम लोग बहुत से अज्ञानतावश दुःखों को पाल लिये हैं और वह दुःख हमारे समझ में, नाश होने को नहीं।

आज एक सज्जन मुझसे मिले थे। वे बड़ा उदासीन थे, अपने घर-परिवार बच्चे व पत्नी से भी उदासीन थे। हमने उनसे कहा- बताइये, आप इस परिस्थिति में, लोगों को छोड़ कर कहीं भी चले जायेंगे तो यह कितनी बड़ी अवहेलना होगी। लोग आपके आश्रित हैं। वे आपका राह देख रहे होंगे- हीले रोजी बहाने मौत वाली समस्या। एक आशा लगी हुई है जिससे कि वे जी रहे हैं। नहीं तो गड्ढे में कूद कर मर जायेंगे। उनका क्या होगा?

बन्धुओं! हम लोग न बहुत बड़े धनवान हैं न बिल्कुल गरीब ही हैं। एक सामान्य हैं- किसी तरह अपने ओद्र का भरण-पोषण कर लेते हैं, दो टाइम नहीं एक टाइम ही किसी तरह से। इस तरह से हमारे देश में, समाज में, स्थानों में समस्यायें हैं। उन समस्याओं का धीरे-धीरे, मेरी भी कुछ कमजोरी है- जिससे ये बढ़ जाती हैं और कुछ यहाँ के समाज और राष्ट्र की भी है-उनका भी देन है। मगर हम सब यही कोसें और उनको कोसते रहे कि नहीं, उनकी ही देन है सो बात नहीं है क्योंकि उस व्यक्ति ने हमसे कह रहे थे कि उनको सात आठ बच्चे हैं। उम्र उनका 40 से 45 वर्ष है। और भी, कई ऐसे व्यक्तियों को मैं अपने यहाँ आते-जाते देखता हूँ, बड़ा व्यथित परिस्थिति में। और, ऐसे व्यक्तियों को जानते है। आप कितने जीवन अस्त व्यस्त होता है। वह बड़ा दुर्भाग्य का जीवन जीता है। उसकी तो हम लोग कोई सहायता नहीं करेंगे न कर सकते हैं कभी।

इसलिए हम लोगों को यहीं चाहिये कि हम भगवान राम तो नहीं हो सकते हैं किन्तु भगवान राम के बताये मार्ग पर और भगवान राम के सेवक का सेवक, तो हो ही सकते हैं। मीरा ने कहा है कि हे भगवान! मुझे अपना नौकर तो भले न बतायें, किन्तु चाकर तो रख ही सकते हैं।

तो बंधुओं! हम जब वीर्य का संग्रह करेंगे और "एक नारी व्रतधारी" बने रहेंगे तो इससे बढ़कर हमारी तपस्या और क्या हो सकती है। किसी देवता देवी के पूजने से और किसी साधु फकीर के द्वारे द्वारे जाने से, यह बहुत बड़ा व्रत है। यह राम की श्रेणी में वह तपस्या होती है। स्त्रियों की भी, जो बहुत तरह की, उनमें भावनायें उत्पन्न होती रहती हैं, जो लालसायें उत्पन्न होती रहती हैं और वह लालसायें और भावनायें, उस घर को, परिवार को व्यथित कर देती है। उस परिवार और घर को, उस व्यथा से बचाने के लिए हर प्रयत्न करना चाहिये। अपने उस देवता के प्रति, यह भावना अवश्य रखना चाहिये कि उसका स्वास्थ्य ठीक रहे, उसकी मनोदशा ठीक रहे, उसका चित्त ठीक रहे। वह बार-बार इस कामराग के चक्कर में न आये, नहीं तो वह राग, मार डालेगा, मार डालेगा, मार डालेगा। हमारा भी स्वास्थ गिरेगा। परिवार परिजनों का भयंकर रोदन शुरू होगा। और उस परिवार परिजनों का भयंकर रोदन पूरा घर, परिवार, समाज को भी उथल-पुथल कर देता हैं।

इसको भी अपने पूजा का एक अंग ही मानना होगा। क्योंकि हम उतने को पूजा माने हुए हैं और सब हम कुछ नहीं समझते हैं कि वह ऐसा है, ऐसा करना है, ऐसा मैं भी करूँ। अरे, भाई! यदि अपना वैसा ही करेंगे तो आपमें और उसमें फर्क ही क्या होगा, कोई फर्क नहीं। आपको तो उससे कुछ भिन्न ही होना चाहिये। आपमें बहुत बड़ी भिन्नता होनी चाहिए हर एक से। यदि आप ठीक से शक्ति की उपासना करना चाहते है तो आपको शक्ति का अवलम्बन लेना ही होगा, शक्ति की रक्षा करनी ही होगी और शक्ति-शुक्र की, वीर्य की बृहस्पति की, आपको सेवा करना ही पड़ेगा।

यदि आप ऐसा नहीं करेंगे, तो वह क्या होगा आप तमाम उन दुःख, क्लेश वेदनाओं के चक्कर में पड़ जायेंगे और आपका सारा जीवन, उस पूजा के प्रसाद से वंचित रह जाता है। उस पूजा और आराधना का जो प्रसाद है, हम तभी उसका अधिकारी हो सकते हैं, जब हम इन सब व्यथाओं के साथ ही, अपने आपको, इन उलूल-जुलूल की, मन में उत्पन्न होने वाला जो व्यवहार है, आचरण हैं, उनको स्थान न देंगे- तभी वह अपनी शक्ति, अपना प्रसाद जो दे रही हैं, उस प्रसाद को, हम ग्रहण कर सकते हैं। नहीं तो उनका प्रसाद तो दे रही हैं, सदैव दे रही हैं, देती रहती हैं, हम लोग

शेष पृष्ठ तीन पर

अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान, वाराणसी

एवं "अघोर सेवा मण्डल" की ओर से .....

नासिक महाकुम्भ मेला 2015 में आपका स्वागत है...

14 अगस्त से 30 सितम्बर, 2015 तक

सम्पर्क करें... 09769373439, 08108434015

पता कैम्प कार्यालय

लक्ष्मण मन्दिर ट्रस्ट कम्पाउण्ड, तपोवन, नासिक, 488, 489 सेक्टर-2-डी, साधुग्राम तपोवन, नासिक (महाराष्ट्र)

अघोर सूत्र

☞ **आश्रम में रहने वाले आश्रम के आश्रित सभी जन साधु नहीं होते औघड़ अघोरेश्वर की तरह वस्त्र पहनने से, माला फेरने से, आसन लगा लेने से, सभी लोगों को गुणधर्म से वैसा मान लेना अनभिज्ञता होगी।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी